|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 3: कर्मयोग

1/4 (श्लोक 1-12), शनिवार, 24 जून 2023

विवेचक: गीता विशारद श्री श्रीनिवास जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/MwIeDqpq3TQ

कर्मयोग का महत्व

आज के विवेचन सत्र का प्रारम्भ गीता प्रार्थना, सद्गुण साधना गीत, मधुराष्टकम्, हनुमान चालीसा, आरम्भिक प्रार्थना और दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। आज हम श्रीमद्भगवद्गीता के तीसरे अध्याय के चिन्तन के सहभागी बनने जा रहे हैं। श्रीमद्भगवत गीता के पहले अध्याय का चिन्तन हम कर चुके हैं। दृश्य यह है कि युद्ध प्रारम्भ होने जा रहा है। परिस्थिति यह है कि युद्ध को किसी भी प्रकार टाला नहीं जा सकता। उस समय अर्जुन के मन में किस प्रकार मोह निर्माण हुआ?

न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ॥ २.९ ।।

तब अर्जुन रथ में पीछे जाकर अपने धनुष बाण का त्याग करते हुए हतोत्साहित होकर बैठ जाते हैं। उसके पश्चात श्रीभगवान अर्जुन को उपदेश देना प्रारम्भ करते हैं। दूसरे अध्याय के ग्यारहवें श्लोक से भगवान का उपदेश प्रारम्भ होता है। अध्याय के दूसरे श्लोक से भगवान अर्जुन को डाँटते हैं। अर्जुन कहते हैं हे माधव मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा मैं आपकी शरण में आया हूँ जो मार्ग मेरे लिए ठीक हो वही कहिये।

दूसरे अध्याय को अनुक्रमणिका कहा जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता की रचना में योगेश्वर श्रीकृष्ण ने जो कहा है वह सब दूसरे अध्याय में बता दिया है। आत्म तत्त्व, ज्ञान मार्ग, कर्म मार्ग और स्थितप्रज्ञ व्यक्ति के लक्षण यह सब दूसरे अध्याय में बताए गए हैं। यह सब सुनकर अर्जुन के मन में प्रश्न आता है कि भगवान दोनों मार्ग का महत्त्व समान बता रहे हैं, कर्म मार्ग और ज्ञान मार्ग।

इस शंका का समाधान करने के लिए तीसरे अध्याय के प्रारम्भ में अर्जुन योगेश्वर श्रीकृष्ण से प्रश्न पूछते हैं। दूसरे अध्याय में भगवान अर्जुन से कहते हैं-

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय ।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ॥ २-४९॥

योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि कर्म से ज्ञान श्रेष्ठ है और उसके बाद कर्म का भी महत्व बताया।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥ २-४७॥

अब स्थिति यह है कि अर्जुन के मन में घोर शङ्का है कि भगवान कैसी बातें कर रहे हैं? एक बार ज्ञान की महत्ता बताते हैं और एक बार कर्म का महत्त्व बताते हैं और मुझे युद्ध का कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं तो तीसरे अध्याय के प्रारम्भ में ही अर्जुन योगेश्वर श्रीकृष्ण से इस बारे में पूछते हैं।

3.1

अर्जुन उवाच ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते, मता बुद्धिर्जनार्दन। तत्किं(ङ्) कर्मणि घोरे मां(न्), नियोजयसि केशव॥3.1॥

अर्जुन बोले -- हे जनार्दन! अगर आप कर्म से बुद्धि (ज्ञान) को श्रेष्ठ मानते हैं, तो फिर हे केशव! मुझे घोर कर्म में क्यों लगाते हैं ? (आप अपने) मिले हुए से वचनों से मेरी बुद्धि को मोहित-सी कर रहे हैं। (अतः आप) निश्चय करके उस एक बात को कहिये, जिससे मैं कल्याण को प्राप्त हो जाऊँ। (3.1-3.2)

विवेचन: अर्जुन ने अपनी बात को अधिक बल देने के लिये भगवान को दो नामों से सम्बोधित किया अर्जुन ने कहा हे जनार्दन! हे केशव! यदि आपकी दृष्टि में ज्ञान श्रेष्ठ है तो आप मुझे युद्ध जैसे भयङ्कर कर्मों में क्यों लगाने को प्रवृत्त हो रहे हैं?

3.2

व्यामिश्रेणेव वाक्येन, बुद्धिं(म्) मोहयसीव मे। तदेकं(वँ) वद निश्चित्य, येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम्॥3.2॥

विवेचन: अर्जुन बोले योगेश्वर कृष्ण मैंने अपने कल्याण के लिए एक उत्तम साधन के लिए आपसे पूछा था और आप मिश्रित वाक्यों से मेरी बुद्धि को मोहित कर रहे हैं। हे माधव मुझे एक निश्चित साधन बता दीजिए। हे जनार्दन आप निश्चित करके मुझे एक बात बता दीजिए जिसको आत्मसात् कर मैं अपना कल्याण कर लूँगा।

हमारे लिए यहाँ सीखने योग्य बात यह है कि अर्जुन योगेश्वर कृष्ण से क्या माँग रहे हैं? अर्जुन यह नहीं पूछ रहे हैं कि माधव मैं किस प्रकार जीत जाऊँगा? मैं क्या करने से यह राज पद प्राप्त कर लूँगा? क्या करने से मुझे सम्पत्ति मिल जाएगी? अर्जुन योगेश्वर कृष्ण से क्या माँगते हैं यह अति महत्वपूर्ण बात है, बिन्दु है। अर्जुन सीधा-सीधा पूछते हैं कि जिस एक बात को करने से, मानने से मेरा कल्याण होगा, मुझे वह बता दीजिए माधव।

श्रीमद्भगवद्गीता के दूसरे अध्याय में भी अर्जुन यही कहते हैं।

कल्पना करें कि भगवान हमारे सामने आकर खड़े हो गए हैं और पूछेंगे तुम्हें क्या चाहिए। तब उस स्थिति के लिए हमें हमारे विवेक को जागृत करना चाहिए कि हम क्या माँगे? धन, सम्पत्ति या बुद्धि।अर्जुन योगेश्वर श्रीकृष्ण से कहते हैं कि मेरे लिए कल्याण का एक मत कहिए। ज्ञानेश्वर महाराज इस बारे में एक बहुत सुन्दर बात कहते हैं - आप ही मिश्रित भाषा बोलने लगेंगे तो हम किधर जाएँगे।

लोढता या घोर संकरी, संकोच कैसा नच तुम्हा ।
देवा तुम्हीच बोलावे ऐसे, तरी आम्ही अज्ञानी करावे कैसे ।।

योगेश्वर श्री कृष्ण अर्जुन की शंका का समाधान करते हैं।

3.3

श्रीभगवानुवाच
लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा, पुरा प्रोक्ता मयानघ।
ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां(ङ्), कर्मयोगेन योगिनाम्॥3.3॥

श्रीभगवान् बोले - हे निष्पाप अर्जुन! इस मनुष्यलोक में दो प्रकार से होने वाली निष्ठा मेरे द्वारा पहले कही गयी है। (उनमें) ज्ञानियों की (निष्ठा) ज्ञानयोग से और योगियों की (निष्ठा) कर्मयोग से (होती है)।

विवेचन: भगवान अर्जुन को बहुत प्रेम पूर्वक समझाते हैं। यह दोनों बातें मैंने पहले भी कही हैं। किसी एक गन्तव्य स्थान पर जाना है तो उसके लिए अलग-अलग मार्ग हो सकते हैं। जैसे कि मुझे नागपुर से दिल्ली जाना है तो मैं रेल से भी जा सकता हूँ और हवाई जहाज से भी।

मार्ग तो भिन्न हो सकते हैं परन्तु यह मेरी योग्यता पर निर्भर करेगा कि मुझे किस मार्ग का चयन करना है। मैं ज्ञान मार्ग का चयन करूँ या कर्म मार्ग का? यह हर व्यक्ति के स्वभाव, उसके प्रवृत्ति पर निर्भर करता है। उसकी योग्यता के अनुसार उसके मार्ग का निर्धारण होगा।

इस बारे में ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं—

आम का पेड़ है उसमें आम लगे हुए हैं और किसी पंछी को यदि वह आम खाने हैं तो उड़ तो जाएगा और आम खा लेगा और यदि यही आम मनुष्य को चाहिए तो उसे शाखा पर चढ़कर फिर आम लेना होगा। अमृत प्राप्ति के लिए पंछी और मनुष्य दोनों का मार्ग अलग है। योग्यता से मार्ग का चयन होगा।

योगेश्वर श्री कृष्ण बोले मैंने तुम्हें दोनों मार्ग बता दिए ।अब तुम्हें जानना चाहिए कि तुम्हारे लिए कौन सा उचित है? यहाँ पर दो प्रकार की मनोवृत्तियों के बारे में भगवान बताते हैं। एक है ज्ञान योग जो विचार प्रधान है और दूसरा है कर्मयोग जो कर्म प्रधान है, क्रिया प्रधान है।

कर्म योग में क्रिया प्रधान है जबकि ज्ञान योग में चिन्तन, ध्यान ,मनन महत्वपूर्ण है। महाराष्ट्र में एक सन्त हुए हैं महाराज गोंदवलेकर जी। उनके जीवन का एक प्रसंग है कि उनके आश्रम के बाहर सड़क निर्माण के कार्य में लगे हुए मजदूर एक दिन बात कर रहे थे कि सन्त बनना बहुत आसान है बैठो और ध्यान करते रहो बस। जब यह बात महाराज ने सुनी तो उन्होंने उनको पास बुलाया और पूछा कि तुम्हें इस कार्य का कितना मेहनताना मिलता है तो वह बोले कि दो आना मिलता है। महाराज जी बोले कि कल से तुम मेरे यहाँ काम पर आ जाना, मैं तुम्हें चारआना दूँगा। वे समय पर सुबह काम पर आ गए और बोले महाराज क्या काम है? महाराज बोले कि तुम दिन भर ध्यान पर बैठना है और जप करना है दो-तीन घंटे बाद उनका बैठना मुश्किल हो गया। अर्थात् हर व्यक्ति अपने स्वभाव के अनुसार ही काम कर सकता है।

अर्जुन योद्धा है, क्रिया प्रधान है तो कर्म योग का चयन करना चाहिए। इसलिए भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण ने उसे कर्म योग का मार्ग समझाया है। आगे भगवान कर्म योग को विस्तार पूर्वक समझाते हैं।

3.4

न कर्मणामनारम्भान्, नैष्कर्म्यं(म्) पुरुषोऽश्नुते।
न च सन्न्यसनादेव, सिद्धिं(म्) समधिगच्छति॥3.4॥

मनुष्य न तो कर्मों का आरम्भ किये बिना निष्कर्मता का अनुभव करता है और न (कर्मों के) त्याग मात्र से सिद्धि को ही प्राप्त होता है।

विवेचन: इस श्लोक में दो शब्द महत्त्वपूर्ण है- नैष्कर्म्य और सिद्धि
नैष्कर्म्य अर्थात् सर्वोच्च अवस्था, मोक्ष की अवस्था। अब उस व्यक्ति को कुछ करने की आवश्यकता नहीं है, ऐसी अवस्था को कहते हैं, नैष्कर्म्य अवस्था। परमात्मा की प्राप्ति रूप अवस्था।

परम सिद्धि का अर्थ और भी गहरा है, ऐसा व्यक्ति कुछ न करते हुए भी सब कुछ कर जाता है और सब कुछ करते हुए भी कुछ नहीं करता। समझने के लिए यह बात अटपटी लगती है। इसके लिए सूर्य भगवान का उदाहरण दिया जा सकता है। सूर्य के प्रकाश से ही पेड़ पौधे उगते हैं, वर्षा होती है। सूर्य भगवान को और अर्पण करते हुए किसी ने उन्हें कहा कि आपके जैसा इतना कार्य करने वाला जो पूरे विश्व में कोई और दिखाई नहीं देता। सूर्य भगवान कहते हैं मैं तो कुछ नहीं करता मैं तो अपने स्थान पर स्थिर हूँ ना तो मैं उदित होता हूँ और न मैं अस्त होता हूँ, धरती घूमती है तो तुम्हें ऐसा लगता है। उन्हीं के कारण धरती पर जीवन है और साथ कुछ न करते हुए भी सब कुछ करते हैं। हमारी धरती का अस्तित्व ही उन्हीं के कारण है। यह है नैष्कर्म्य सिद्धि, परम सिद्धि।

मोक्ष का अर्थ है दु:ख से मुक्ति। दु:ख से मुक्ति सभी चाहते हैं। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कोई भी व्यक्ति कर्म किए बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर सकता।

सन्त तुकाराम महाराज कहते हैं—

मोक्ष के साथ मेरा विवाह हो गया अभी क्या करना है सिर्फ आनन्दमय जीवन बिताना है। देहधारी मनुष्य के लिए दु:ख से मुक्ति प्राप्त करने के लिए कर्म करना अनिवार्य है। सन्यास लेने से, सब कुछ छोड़ देने से मुक्ति नहीं मिलती, उसके लिए पहले कर्म योग का आचरण करना पड़ता है।

योगेश्वर श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं अगर परम सिद्धि प्राप्त करनी है तो पहले कर्म करना ही पड़ेगा। आगे भगवान स्पष्ट करते हैं कि बिना कर्म किए तो कोई एक क्षण भी नहीं रह सकता।

3.5

न हि कश्चित्क्षणमपि, जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः(ख्) कर्म, सर्वः(फ्) प्रकृतिजैर्गुणैः॥3.5॥

कोई भी (मनुष्य) किसी भी अवस्था में क्षणमात्र भी कर्म किये बिना नहीं रह सकता; क्योंकि (प्रकृति के) परवश हुए सब प्राणियों से प्रकृति जन्य गुण कर्म करवा लेते हैं।

विवेचन: कोई भी मनुष्य, प्राणी कर्म किए बिना नहीं रह सकता। कुछ क्रियाएं ऐसी है, जो सदैव अनवरत चलती रहती है और हमें ध्यान भी नहीं रहता यथा साँस लेना, भोजन करना आदि। इसके लिए कुछ कमाना भी पड़ेगा। कर्म मनुष्य को करना ही पड़ेगा भगवान आगे की पंक्ति में स्पष्ट करते हैं कि कर्म के बिना हम क्यों नहीं रह सकते। हम प्रकृति के वश में है। यह हमारा शरीर प्रकृति का बना हुआ है। श्रीमद्भगवत गीता के चौदहवाँ अध्याय में बताया गया है कि यह प्रकृति त्रिगुणात्मक होती है, सत्त्व, रज और तम। यह हमारा शरीर इन तीन गुणों से मिलकर बना है। हम उस शरीर के बन्धन में बंधे हैं। जब तक शरीर है हमें साँस लेनी पड़ेगी, जलपान भोजन करना ही पड़ेगा। प्रकृति के इन तीन गुणों के बन्धन में होने के कारण परवश है। हमारे मन का कर्म तो चलता ही रहता है, शरीर के कार्य तो एक समय रुक भी सकते हैं।

3.6

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य, य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा, मिथ्याचारः(स्) स उच्यते॥3.6॥

जो कर्मेन्द्रियों (सम्पूर्ण इन्द्रियों) को (हठपूर्वक) रोककर मन से इन्द्रियों के विषयों का चिन्तन करते हुए बैठता है, वह मूढ़ बुद्धि वाला मनुष्य मिथ्याचारी (मिथ्या आचरण करने वाला) कहा जाता है।

विवेचन: कोई व्यक्ति संयम रखते हुए कहे कि आज मैं भोजन नहीं करूँगा। लेकिन जब भोजन का समय होता है तब मन अपने आप रसोई में चला जाता है और हम सोचने लगते हैं कि आज हमारे मनपसन्द सब्जी बनी है काश हमने यह नियम कल से प्रारम्भ किया होता। कर्मेन्द्रिय पर संयम रखते हुए उसे रोक कर रखा, किन्तु मन निरन्तर उस विषय का स्मरण कर रहा है।

यह एक विषय नहीं है मनुष्य के चिन्तन करने के लिए और भी बहुत से विषय है। हम यहाँ बैठे रहते हैं और हमारा मन दूसरे किसी विषय का चिन्तन कर रहा होता है। कोई बालक पढ़ाई करने के लिए बैठता है और दूसरे कमरे में क्रिकेट का फाइनल मैच चल रहा है तब उस बालक का मन बार-बार उधर दौड़ रहा होता है क्या हुआ होगा?

भगवान कहते हैं कि मुझे यह अपेक्षित नहीं है कि ऊपर से कर्म रोक कर उसका चिन्तन किया जाए, कर्म का चिन्तन करने से उचित कर्म ही करना है। योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं ऐसे करने वाला व्यक्ति मिथ्याचारी है वह दम्भी भी है ।

एक बार दो युवा संन्यासी वन से जा रहे थे। उन्हें नदी को पार करके जाना था, जिसमें पानी ज्यादा नहीं था। इसमें में एक युवती की चीख सुनाई दी मुझे डूबने से बचाइए। एक सन्यासी ने तो उसकी तरफ देखा भी नहीं और दूसरा संन्यासी तैरकर गया और उसे पानी से निकालकर किनारे पर पहुँचा दिया। युवती ने सन्यासी को धन्यवाद दिया। दूसरे संन्यासी के मन में विचार आया कि मेरे मित्र संन्यासी ने स्त्री का स्पर्श कर लिया जो कि संन्यास में वर्जित है। अगले दिन अपने गुरुदेव से उन्होंने इस बारे में पूछा कि मेरे साथी ने इस प्रकार स्त्री का स्पर्श कर लिया है और आप तो कहते हैं कि संन्यास में वर्जित है। मित्र को बुलाया गया तो वह बोल कि हाँ मुझे याद आया वह स्त्री डूब रही थी और मैंने तो उसे किनारे पर लाकर छोड़ दिया था। तब गुरुदेव बोले कि उसने तो वहीं छोड़ दिया था और तुम अब तक पकड़े बैठे हो। उसने तो अपना कर्म किया और भूल गया लेकिन तुमने अपने चित्त में अभी भी उसे पकड़ कर रखा हुआ है। चित्त से विषयों का चिन्तन होता है यह भगवान को अपेक्षित नहीं है। कहते हैं कि शरीर के द्वारा अपने कर्त्तव्य कर्मों का पालन करते रहो और मन के द्वारा उसके चिन्तन में नहीं अटकना है। भगवान योगेश्वर ने जिस प्रकार मिथ्याचार क्या है यह बताया इसी प्रकार उचित क्या है यह भी बता रहे हैं।

3.7

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा, नियम्यारभतेऽर्जुन।
कर्मेन्द्रियैः(ख्) कर्मयोगम्, असक्तः(स्) स विशिष्यते॥3.7॥

परन्तु हे अर्जुन! जो (मनुष्य) मन से इन्द्रियों पर नियन्त्रण करके आसक्ति रहित होकर (निष्काम भाव से) कर्मेंद्रियों (समस्त इन्द्रियों) के द्वारा कर्मयोग का आचरण करता है, वही श्रेष्ठ है।

विवेचन: जो व्यक्ति अपने मन के द्वारा अभ्यास से इन्द्रियों पर संयम लाता है, अपनी कर्मेन्द्रियाों द्वारा कर्म करता है बल्कि यह कहें कि मात्र कर्म इन्द्रियों से कर्म करता है, मन को उसमें अटकाता नहीं है उलझता नहीं है। विषयों के चिन्तन में नहीं रहता। श्रीमद्भगवत गीता में भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि वह मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है। अँग्रेजी में प्रसिद्ध कविता है-

Work while you work
Play while you play.
One thing each time,
That is the way.

All that you do,
Do with your might.
Things done by halves
Are not done right.

यदि काम करना है तो काम करो और खेलना है तो सिर्फ खेलो एक समय में एक ही काम पर अपनी पूरी शक्ति झोंक दो। ऐसे नहीं होना चाहिए कि हम बैठे तो पढ़ने के लिए हैं और मन में चिन्तन खेल का हो रहा है। एक बार की बात है दो मित्र जगन्नाथपुरी के लिए निकले रास्ते में भुवनेश्वर आया तो पता चला कि वहाँ 20-20 मैच हो रहा था तो एक मित्र ने कहा कि आज यहाँ मैच देख लेते हैं और जगन्नाथ पुरी के दर्शन के लिए कल चलेंगे। दूसरे मित्र ने कहा कि हम जगन्नाथ जी के दर्शन के लिए निकले हैं तो हमें पहले वहीं जाना चाहिए। दोनों मित्रों के बीच मतभेद हो गया पहले वाले ने कहा कि मैं तो मैच देख कर आऊँगा, तुम्हें जाना है तो तुम जाओ। दूसरा मित्र जगन्नाथ जी के दर्शन के लिए पहुँच गया, जगन्नाथ जी के सामने खड़ा है, दर्शन कर रहा है लेकिन मन में विचार है कि मेरा मित्र तो वहाँ मस्त मैच देख रहा होगा। इसी प्रकार दूसरे मित्र के मन में भी यही चल रहा होता है कि मैं तो यहाँ मैच देख रहा हूँ और वह जगन्नाथ जी के दर्शन कर रहा होगा, क्या ही अद्‌भुत दर्शन हुए होंगे कितना भाग्यशाली है वह। इस दृष्टान्त से पता चलता है कि कौन कहाँ है? हम वहाँ होते हैं जहाँ हमारा मन होता है। इस बारे में योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि वह व्यक्ति विशिष्ट है जो अपने मन को संयमित करके व्यवहार करता है।

इस प्रकार हम कर्म योग के कई पायदान देखते आ रहे हैं। पहला तो यह है कि हम बिना कर्म किए रह नहीं सकते। यह निश्चित है कि कर्म करना ही है। मन को विषयों में अटकाए बिना कर्म करना है।

कर्त्तव्य पूर्ण मनोयोग से किया और उसके बाद अगले कर्त्तव्य की ओर बढ़ चलें। अब महत्त्वपूर्ण बात यह आ जाती है कि कर्म कौन सा करना है? इस बारे में भगवान अगले श्लोक में बताते हैं।

3.8

नियतं(ङ्) कुरु कर्म त्वं(ङ्), कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते, न प्रसिद्ध्येदकर्मणः॥3.8॥

तू शास्त्र विधि से नियत किये हुए कर्तव्य कर्म कर; क्योंकि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है तथा कर्म न करने से तेरा शरीर-निर्वाह भी सिद्ध नहीं होगा।

विवेचन: उसी बात को माधव एक बार फिर से दोहराते हैं कि अकर्मण्य रहकर तुम्हारा शरीर ही नहीं चल पाएगा। खाना, पीना, भोजन, विश्राम यह सब कार्य करने ही होंगे। आगे योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि कौन-कौन से कार्य करना है? नियत कर्म, तुम्हारे लिए जो निर्धारित कर्म है, तुम्हारे स्वभाव के जो अनुकूल कर्म है, तुम्हें वह कर्म करना है। अब यह नियत कर्म कैसा है? कर्म के बहुत सारे प्रकार हैं यथा विहित कर्म, नियत कर्म, नित्य कर्म और नैमित्यिक कर्म है। विहित कर्म बड़े परिदृश्य की बात है उसका एक छोटा अंश है नियत कर्म। नियत कर्म विहित कर्म का ही एक भाग है। हमें शास्त्रों में बताया गया है कि विहित कर्म है जो हमें करने हैं। वेद शास्त्रों में बताया गया है कि चार प्रकार के वर्ण हैं और सब चार प्रकार के कार्य करते हैं यह उनके गुणों पर निर्भर करता है इसके बारे में श्रीमद्भगवत गीता की चौथे अध्याय में बताया गया है। यह सब व्यक्ति विशेष के स्वभाव पर निर्भर करता है। क्षत्रिय के क्षात्र बुद्धि है, वैश्य की व्यापारिक बुद्धि है तो उन्हें वह कार्य सहज ही अनुकूल लगते हैं। कौन क्या कार्य करेगा यह निर्भर करता है कि वह किस आश्रम किस आयु की अवस्था में है यथा ब्रह्मचर्य आश्रम अर्थात् विद्यार्थी। वानप्रस्थ आश्रम आदि के नियत कर्म भिन्न-भिन्न है, अलग-अलग हैं। उनके विहित कर्म अलग-अलग हो जाते हैं। जैसे छात्र हैं तो उसका कार्य है- पढ़ाई करना। इस कार्य में उसका हित है, जिस कार्य में हित है अर्थात् वह है विहित कर्म। मान लो वह छात्र मेडिकल साइंस की पढ़ाई करता है। तो उसका विहित कर्म है पढ़ाई करना नियत कर्म है मेडिकल साइंस की पढ़ाई करना। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि तुम्हारे वर्ण और आश्रम के अनुसार जो तुम्हारा नियत कर्म हो तुम्हें उस पथ पर अग्रसर होना चाहिए। अकर्मण्य रहने से कर्म करना श्रेष्ठ है। तुम अपना नियत कर्म करो। यदि कोई न्यायाधीश है उसका कार्य है न्याय

देना अगर वह उसे टालेगा या नहीं करेगा तो सारी गड़बड़ हो जाएगी काम नहीं चलेगा।

कर्म रहित रहना सम्भव नहीं है तो हमें शास्त्रों के अनुकूल ही कर्म करने चाहिए। जो उचित है, जिस अवसर पर जो कर्म करना है वह करना चाहिए।

कुछ नैमित्तिक कर्म होते हैं जैसे पिताजी का देहान्त हो गया, तर्पण आदि जो भी कर्म करने हैं उस दिन के नैमित्तिक कर्म है वह करने ही है।

3.9

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र, लोकोऽयं(ङ्) कर्मबन्धनः।
तदर्थं(ङ्) कर्म कौन्तेय, मुक्तसङ्गः(स्) समाचर॥3.9॥

यज्ञ (कर्तव्य पालन) के लिये किये जाने वाले कर्मों से अन्यत्र (अपने लिये किये जाने वाले) कर्मों में लगा हुआ यह मनुष्य समुदाय कर्मों से बँधता है, (इसलिये) हे कुन्तीनन्दन ! तू आसक्ति-रहित होकर उस यज्ञ के लिये (ही) कर्तव्य कर्म कर।

विवेचन: **यज्ञ** शब्द भगवान का प्रिय है। अग्नि कुण्ड में आहुति देना यज्ञ है परन्तु श्रीमद्भगवद्गीता के सन्दर्भ में यज्ञ की परिभाषा अति विशाल है। अगले अध्याय में योगेश्वर श्रीकृष्ण यज्ञ के कई प्रकार बताते हैं। हमें यज्ञ की परिभाषा भली-भाँति जान लेनी चाहिए। अग्नि कुण्ड में आहुति देते हुए जो हम यज्ञ करते हैं वह देवताओं को प्रसन्न करने के लिए कई प्रकार से किए जाते हैं। अलग-अलग देवताओं को प्रसन्न करने के लिए वह यज्ञ किए जाते हैं। भगवान योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं कि यज्ञ की भावना से किए गए कर्म के अतिरिक्त अन्य कर्म मनुष्य को बन्धन में बाँधते हैं। यह कर्म सञ्चित होकर प्रारब्ध का रूप ले लेते हैं। ऐसे कर्मों के करने से मनुष्य बन्धन में अटक जाता है लेकिन जब मनुष्य यज्ञ की भावना से कर्म करता है तो वह इस बन्धन से मुक्त होता जाता है।

हम जिस परिवार, समाज और देश में रहते हैं वहाँ हम बचपन से लेकर आज तक जिन व्यक्ति, वस्तु, दृश्य आदि को उपयोग में लाए हैं जैसे कि पेड़ हमने नहीं लगाएं लेकिन हम उसके फल खा रहे हैं, विद्यालय हमने नहीं बनाया लेकिन हम उसमें पढ़ रहे हैं, रास्ते किसी और ने बनाए और हम उस पर चल रहे हैं। पूरे समाज के द्वारा हमारा जीवन चलता है। यह सब हमारे जीवन रण में सहायक होते हैं उनके प्रति कृतज्ञता की भावना होनी चाहिए। कुछ सहायक हमें दिखाई देते हैं ,कुछ सूक्ष्म रूप से हमारे जीवन को सुगम बनाते हैं जैसे कि यह विवेचन सत्र चल रहा है और आप सब लोग सुन रहे हैं और मैं बोल रहा हूँ लेकिन पर्दे के पीछे बहुत से सहायक मिलकर इस कार्य को सम्पन्न करते हैं। हमें सूक्ष्म रूप से उनकी सहायता मिल रही है। इसी प्रकार सभी के सहयोग से हमारा जीवन चलता रहता है। उन सभी के प्रति हमारा भी कुछ कर्त्तव्य बनता है। जैसे नियत कर्म है उसी प्रकार समाज के लिए भी हमारे कुछ कर्त्तव्य हैं अर्थात एक ऋण है हम पर जिसे हमें चुकाना चाहिए। यह भी हमारा नियत कर्म है। परन्तु यह व्यक्ति विशेष के मानने न मानने पर है। कोई कह सकता है कि मैं ऐसा कुछ नहीं मानता मैं तो अपनी कमाई से अपना जीवन चला रहा हूँ। एक सभ्य घर की महिला को मैंने कहते सुना कि हम तो किसी का नहीं लेते हम तो खुद की कमाई का खाते हैं। अगर सोचे तो किसान खेत में अन्न उगाता है तब हमें वह मिलता है। कोई उस अनाज को साफ करता है तब हमें मिल पाता है, उन सब के प्रति धन्यवाद की भावना होनी चाहिए। इस ऋण को चुकाने के लिए कर्म करना है। चार प्रकार के ऋण होते हैं पितृ ऋण, ऋषि ऋण, देव ऋण और समाज ऋण।

हमें अलग-अलग देवताओं की सहायता मिलती रहती है। उनका भी ऋण है हम पर। हमारी अलग-अलग अलग इन्द्रियों के भी अलग-अलग देवता है। यथा जीभ के देवता है अग्नि, नेत्रों के देवता है सूर्य। इस प्रकार सभी देवता सूक्ष्म रूप से हमारी सहायता करते रहते हैं। जो पवन बहती है उसके भी कोई देवता है। यह धरा जो हमारा भार सहन करती है उसके भी हम ऋणी हैं।

कविता——-
क्या धरा हमने बनाई, क्या बुना हमने गगन।।
क्या हमारी ही वजह से बह रहा सुरभित पवन।।

ग़र नहीं तो तब हमारे मन मुताबिक़ क्यों चलें।।
क्यों हमारी चाहतें सूरज उगे सूरज ढले।।

सबके प्रति धन्यवाद देते हुए संगठित रूप से कार्य करना ही यज्ञ है। इसीलिए हम कहते हैं कि यह गीता परिवार का महायज्ञ चल रहा है। सब लोग मिलकर इस कार्य में लगे हुए हैं। यह निरपेक्ष भाव से किया गया कार्य, यज्ञ में आहुति देने के समान है। इसमें कुछ प्राप्त करने की चाह नहीं है और अन्त में जो प्राप्त होता है वह प्रसाद रूप में ग्रहण किया जाता है। ऐसा कार्य बन्धन में नहीं डालता। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं इसलिए यह यज्ञार्थ कर्म करो। भावना से कर्म करो। समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य को पूरा करो।

ऋषि ऋण
बहुत पुराने काल से हमारे ऋषि मुनि किसी अपेक्षा के बिना समाज के प्रति अपना उत्तरदायित्व निभा रहे हैं, सही राह दिखा रहे हैं। वैज्ञानिक शोध कर रहे हैं जिससे कि हमारा जीवन सुखकर बन जाए। उनके प्रति हमारा ऋण है। हमारे माता पिता, दादा दादी, नाना नानी आदि सब काम पर ऋण है।

देवताओं के हम पर ऋण हैं जैसे वायु देव, सूर्य देव, अग्नि देव आदि। इन सब के प्रति कृतज्ञता की भावना रखते हुए जीवन पथ पर आगे बढ़ना है। मनुष्य के द्वारा बिना किसी अपेक्षा के समाज के कल्याण के लिए किया गया कर्त्तव्य ही है। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि इसके लिए कर्म करो। भगवान कहते हैं कि अपना काम करते हुए भी समय-समय पर कुछ ना कुछ ऐसा कर्म करो जिससे तुमको कोई अपेक्षा ना हो, जिससे सृष्टि का उत्थान हो। ऐसा कर्म करो जो किसी के कल्याण के लिए हो। उससे तुम्हें मोक्ष की मन:शान्ति मिलेगी।

मनुष्य को जीवन में भौतिक समृद्धि और शान्ति दोनों की आवश्यकता होती है। भौतिक उन्नति तो हम अपने कर्मों से कर लेंगे। खूब धन कमा सकते हैं लेकिन मन: शान्ति की प्राप्ति के लिए यज्ञार्थ कर्म करने होंगे, समाज के कल्याण के लिए कर्म करने होंगे, नि:स्वार्थ भाव से कर्म करने होंगे। इस बारे में ज्ञानेश्वर महाराज का बहुत सुन्दर कथन है-

अपने कर्त्तव्य अच्छे ढंग से करते जाना, किसी से कोई अपेक्षा ना रखना यही नित्य यज्ञ की महा स्थिति है।

3.10

सहयज्ञाः(फ्) प्रजाः(स्) सृष्ट्वा, पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वम्, एष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥3.10॥

प्रजापति ब्रह्माजी ने सृष्टि के आदिकाल में कर्तव्य कर्मों के विधान सहित प्रजा (मनुष्य आदि) की रचना करके (उनसे प्रधानतया मनुष्यों से) कहा कि (तुम लोग) इस कर्तव्य के द्वारा सबकी वृद्धि करो (और) यह (कर्तव्य कर्मरूप यज्ञ) तुम लोगों को कर्तव्य-पालन की आवश्यक सामग्री प्रदान करने वाला हो। इस (अपने कर्तव्य कर्म) के द्वारा (तुम लोग) देवताओं को उन्नत करो (और) वे देवता लोग (अपने कर्तव्य के द्वारा) तुम लोगों को उन्नत करें। (इस प्रकार) एक-दूसरे को उन्नत करते हुए (तुम लोग) परम कल्याण को प्राप्त हो जाओगे। (3.10-3.11)

विवेचन: प्रजापति ब्रह्मा ने सृष्टि के निर्माण के साथ कर्त्तव्य का निर्धारण किया है। उसके लिए यज्ञ कर्म निश्चित है। प्रजापति ब्रह्मा ने कहा कि तुम अपने स्वधर्म का पालन करते हुए, अपने अपने यज्ञ का पालन करते हुए अपना उत्कर्ष कर लो। अपने साथ सभी का उत्कर्ष कर लो। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्त्तव्य का पालन सही ढंग से करेगा तो सभी का कल्याण होगा। कल्पना कीजिए कि हर व्यक्ति अपना कर्म ठीक से कर रहा है तो सृष्टि का कार्य सुचारु रूप से चलेगा। प्रजापति ब्रह्मा जी ने आशीर्वाद दिया कि यह यज्ञ आपके लिए सम्पूर्ण कामनाएं पूरी करने वाला हो।

3.11

**देवान्भावयतानेन, ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं(म्) भावयन्तः(श्), श्रेयः(फ्) परमवाप्स्यथ॥3.11॥**

तुम लोग इस यज्ञ के द्वारा देवताओं को उन्नत करो और वे देवता तुम लोगों को उन्नत करें। इस प्रकार निःस्वार्थ भाव से एक-दूसरे को उन्नत करते हुए तुम लोग परम् कल्याण को प्राप्त हो जाओगे।

विवेचन: प्रजापति ब्रह्मा ने कहा कि इसके द्वारा तुम अपने सभी सूक्ष्म और स्थूल सहायकों के कल्याण के लिए कर्त्तव्य कर्म करते रहो। आप देवताओं के लिए कार्य करें, देवता गण आपको आशीर्वाद प्रदान करेंगे।हम प्रकृति की रक्षा करें, पेड़ पौधों की रक्षा करें, नदी-नालों की रक्षा करें तो अन्ततः वे हमारे लिए ही कल्याणकारी होगा। एक दूसरे के हित के लिए कार्य करते रहें।

एक बार एक युवा ने देखा कि एक वृद्ध पुरुष वर्षा ऋतु में आम के बीज बो रहे थे। युवक ने कहा कि आपको इससे क्या फायदा होने वाला है? आपके जीवन में तो आप इस फल को नहीं खा पाएँगे। उनका जवाब सुनकर युवक कुछ सोचने पर विवश हो गया। वृद्ध पुरुष ने कहा कि जो आम मैंने खाए थे उसका पेड़ भी मैंने नहीं लगाया था। यह मेरा कर्तव्य है कि मैं अगली पीढ़ी के लिए यह काम करूँ।

घर में जो बड़े होते हैं वह छोटों के हित के लिए कार्यरत रहते हैं। उनका अच्छा खानपान हो, उनकी अच्छे से देखभाल हो। वही बच्चे बड़े होकर फिर वृद्धों की सेवा करते हैं। दोनों एक दूसरे के लिए अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करते हैं। प्रजापति ब्रह्मा ने कहा कि जीवन के हर पायदान पर अपने कर्त्तव्य का पालन करके तुम श्रेष्ठता को प्राप्त हो।

भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण ने कहा है कि अकर्मण्य नहीं रहना और नियत कर्म करते जाना है जिससे कि एक दूसरे का कल्याण हो। सबके कल्याण की भावना से, संगठित रूप से किया गया कार्य यज्ञ कहलाता है। वह सबके लिए कल्याणकारी हो जाता है।

3.12

**इष्टान्भोगान्हि वो देवा, दास्यन्ते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो, यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः॥3.12॥**

यज्ञ के द्वारा बढ़ाये हुए देवता तुम लोगों को बिना माँगे ही इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे। इस प्रकार उन देवताओं के द्वारा दिए हुए भोगों को जो पुरुष उनको बिना दिए स्वयं भोगता है, वह चोर ही है।

विवेचन: हम देवी देवताओं के लिए यज्ञ करते हैं, अपने से छोटे और बड़ों के हित के लिए कार्य करते हैं तो वे प्रसन्न हो जाते हैं। यज्ञ से प्रसन्न हुए देव उन्हें आशीर्वाद देते हैं। इस प्रकार समाज में एक दूसरे के लिए कार्य करने से हमें जो चाहिए वो प्राप्त होता रहता है। यह जो भिन्न-भिन्न कर्म करने से भिन्न-भिन्न भोगों की प्राप्ति होती हैं वह मेरी अकेले की नहीं है उसमें सब की हिस्सेदारी है। सब ने अपना कार्य किया है इसलिए मुझे प्राप्त हुआ, उसे अकेले भोगने वाला चोर कहलाता है। जिस समाज से हमें यह प्राप्त हुआ है उसको कुछ लौटाने का कर्त्तव्य, उसके लिए शुभ सोचने का संकल्प करना ही उचित नीति है। जो समाज को कुछ न लौटाते हुए केवल स्वयम् भोगना चाहता है, योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं वह चोर के समान है। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि अपने नियत कर्म अवश्य करने चाहिए। सब के हित के लिए कार्य करने से जो आनन्द की प्राप्ति होती है वही मेरी कृपा है और अपनी आवश्यकता से अधिक जो भी मेरे पास है उसमें सबकी हिस्सेदारी है। यह विवेचन सत्र भी इसी का परिणाम है। यह गुरुदेव का दिया प्रसाद है जो हम सबको मिल बाँटकर खाना है।

इसके साथ आज का विवेचन सत्र समाप्त हुआ एवं प्रश्नोत्तर हुए।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता - शिल्पी दीदी:

प्रश्न- सातवें श्लोक का अर्थ बताइए।

उत्तर: जो व्यक्ति मन के द्वारा इन्द्रियों को नियन्त्रित करता है और प्रभु का चिन्तन करता है तो उसका मन विषयों की तरफ दौड़ता नहीं है। जैसे हमारी पाँच ज्ञानेंद्रियाँ हैं आँख, नाक, कान, त्वचा, जीभ उसी प्रकार पाँच कर्मेंद्रियाँ हैं जैसे पैरों से चलना हाथों से लेन-देन करना आदि। इसके साथ-साथ मन और बुद्धि के द्वारा भी कार्य चलता रहता है। भगवान योगेश्वर कहते हैं कि जो मनुष्य अपने कर्म इन्द्रियों से करता है और मन के द्वारा उन विषयों में फँसता नहीं है यह योग की उच्चतम स्थिति है कि कर्मेंद्रियों से कर्म योग को आचरण में लाता है। यज्ञार्थ कर्म करता है। यह घर गृहस्थी भगवान की दी है उसे अच्छे से रखना यही मात्र कर्त्तव्य है, परिवार जन के हित के लिए कार्य करना। कर्म योग से कर्म करते रहना चाहिए। अमुक कार्य करने से मुझे क्या मिलेगा? यह चिन्ता न करते हुए कार्य करना। मन को विषयों में अटकाना नहीं है। अपने बालक का पालन पोषण करना, उन्हें अच्छे संस्कार देना यह हमारा कर्त्तव्य है, इसके लिए नहीं कि वह बड़ा होकर हमें अच्छे से सँभाल ले। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण कहते हैं कि कर्त्तव्य के भाव से जो कार्य करता है ,वह व्यक्ति श्रेष्ठ है।

प्रश्नकर्ता- नरेन्द्र व्यास भैया

प्रश्न - ग्यारहवें श्लोक में मनुष्य किस प्रकार देवताओं को उन्नत करते हैं?

उत्तर: उनके लिए यज्ञ करते हुए, देवताओं के पूजन के द्वारा, उनको आहुति अर्पित करके। जैसे सृष्टि के शुभ के लिए वृक्ष काटने नहीं चाहिए और वृक्षारोपण करना चाहिए, नदियों में कचरा नहीं डालना चाहिए, नदी को साफ सुथरा रखना चाहिए। यह सब कार्य उनकी पूजा ही कहलाएँगे। भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण ने गिरिराज की पूजा करके हमें यही सन्देश दिया है कि यह सब कार्य यज्ञ हैं।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं

पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||